गीता दर्शन का शैक्षिक अवदान

***डॉ. सत्यनारायण भारद्वाज**
सहायक आचार्य
प्राकृत एवं संस्कृत विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाड़नूं
E-mail - satya.narayanjvbi@gmail.com

****ममता शर्मा**
प्रवक्ता
श्री संस्कार शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालय, बस्सी, जयपुर
E-mail - mamtasharmabassi60@gmail.com

शोध सारांशः—प्राचीन काल में तत्कालीन परिस्थितियों को केन्द्रित करते हुये अनेक ग्रन्थों की रचना की गई है। इनमें से कुछ ग्रंथ ऐसे है जो वर्तमान समय में भी अपनी महत्ता एवं उपयोगिता सिद्ध करते है। उन प्रमुख ग्रन्थों में वेद, उपनिषद्, महाभारत, बाइबिल, कुरान, श्री रामचतिमानस एवं श्रीमद् भगवद्गीता है। इन सभी ग्रंथों के माध्यम से व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र की शिक्षा किसी न किसी रुप में अवश्य प्राप्त होती है अगर व्यक्ति इन ग्रंथो का अध्ययन कर एवं नीहित शिक्षा को ग्रहण करते हुये जीवन यापन करता है तो वह निश्चित ही अपने सांसारिक (लौकिक) एवं आध्यात्मिक (आलौकिक) जीवन में समन्वय स्थापित करके जीवन के अद्भुत आनन्द की प्राप्ति कर सकता है लेकिन श्रीमद्भगवद्गीता एक ऐसा ग्रंथ है जो मनुष्य को अपने कर्त्तव्यों के प्रति सजग रहने के लिए मार्गदर्शित करता है श्रीमद्भगवद्गीता भगवान श्री कृष्ण द्वारा कुरुक्षेत्र के मैदान में अपने सखा अर्जुन के मन में चल रहे अन्तर्द्वन्द्व को समाप्त करने के लिए उपदेश मे दी गई शिक्षा है । भगवान श्री कृष्ण के द्वारा उपदेश मे दी गई शिक्षा को वर्तमान की शिक्षा प्रणली मे अपनाते हुये शिक्षण—प्रकिया को सफलता के उच्चतम शिखर पर पहुँचा सकते है । अतः वर्तमान युग की आवश्यकताओं को अनुभूत करते हुये मैने '' श्रीमद्भगवद्गीता दर्शन के शैक्षिक योगदान '' को अपने शोधालेख का विषय बनाते हुये भगवद्गीता की शिक्षा को समसामयिक दृष्टि से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

मुख्य शब्दः—''श्रीमद्भगवद्गीता, निष्काम कर्म, शिक्षा, शिक्षा का लक्ष्य, अपरा विद्या, परा विद्या अम्रतोपम, अव्याख्येय, मानवतावादी मूल्य, जीवन दर्शन, सत्यं—शिवं—सुन्दरम,

भूमिकाः—श्रीमद्भगवद्गीता अखण्ड कोटि, ब्रह्माण्डनायक, परंब्रह्मा, परमात्मा भगवान श्री कृष्ण के मुखारविन्द का दिव्य संदेश है। यह महाभारत रूपी रत्नमयी महामाला का प्रधान दैदीप्यमान रत्न है । यह अनेक जन्मों से संसार—सागर में निमज्जन करने वाले प्राणियों के उद्धरण हेतु महानौका है ।

लोकमान्य बालगंगाधर तिलक के अनुसार –''श्रीमद्भगवद्गीता हमारे धर्मप्रन्थों से एक अत्यन्त तेजस्वी और निर्मल हीरा है। यह ग्रंन्थ वैदिक धर्म के भिन्न–भिन्न सम्प्रदायों में वेद के समान आज करीब ढाई हजार वर्ष से सर्वमान्य तथा प्रमाण स्वरूप हो रहा है। ''[1]

इस ग्रंथ का जन्म उस समय होता है जब अर्जुन युद्ध करना नहीं चाहता । श्री कृष्ण उसे युद्ध–धर्म के लिए प्रेरित करते है । यह वार्तालाप ज्ञान, भक्ति, कर्म का मार्ग है साक्षात् ईश्वर तथा मनुष्य के मध्य संवाद है ।महर्षि अरविन्द ने गीता के उपदेश को आधुनिक युग में अनुकरणीय माना है।

तिलक ने अपनी प्रसिद्ध रचना गीता रहस्य में स्पष्ट कहा है कि – ''मानवी श्रम, जीवन और कर्म की महिमा का उपदेश अपनी अधिकार वाणी से देकर सच्चे आध्यात्म का संदेश गीता दे रही है । जो कि आधुनिक काल के ध्येयवाद के लिए आवश्यक है। ''[2]

'' कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।

मा कर्मफलहेतुभुमा ते संग्डोऽस्तवकर्मणि ।।[3]

गीता में कहा गया की कर्म पर ही तुम्हारा अधिकार है, कर्म फल पर नहीं । अतएव कर्त्तव्य का पालन करते रहना और अच्छे बुरे किसी प्रकार के फल की इच्छा न रखना ही कर्म योग है ।

योगेश्वर श्री कृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता मे अमृतपोम अव्याख्येय अनूठे, अनमोल और अनश्वर बोल बोले है वैसे बोल कभी भी, कहीं भी, किसी काल में नही बोले गये है । इसमे वक्ता भगवान श्री कृष्ण है तो श्रोता प्रिय मित्र अर्जुन है । संकलन कर्त्ता श्री वेद व्यास जी हैऔर लेखक बुद्धि प्रदायक श्री गणेश है। भगवान श्री कृष्ण ने अपने उपदेश में बहुत सी श्रुतियाँ कही थी । जो उन्होने गद्य में कहा थाउनको भी श्री वेद व्यास जी ने स्वयं श्लोक बद्ध कर लिया एंव अर्जुन, संजय व धतृराष्ट्र के वचनों को भी अपनी भाषा में श्लोक भाषा बद्ध कर लिया । जिस प्रकार स्मृतियाँ अठारह है, पुराण भी अठारह हजार है, कौरव – पाण्डवों की सेना भी अठारह अक्षौहिणी थी, युद्ध भी अठारह दिन चला था, वैसे भगवद्गीता मे भी अठारह अध्याय ही है । सात सौ श्लोको का यह ग्रंथ रत्न महाभारत के भीष्म पर्व के 25 से 42 अध्याय का अंग है । इसके प्रथम छः अध्याय ईश्वर ज्ञान से संबंधित एवं इसके बाद के छः अध्याय विज्ञान ज्ञान (जगत) से संबंधित है और अन्तिम छः अध्याय आत्मज्ञान जीवात्मा की व्याख्या करते है– 1 ईश्वर, 2 जगत, 3 जीवात्मा गीता दर्शन मे विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का समावेश है । न्याय, वैशविक, सांख्य, योग, मीमांसा और वेदान्त की झलक गीता में स्पष्ट दिखाई देती है ।

डॉ राधाकृष्णन'' गीता का रचनाकाल ईसा पूर्व पाँचवीं शताब्दी के पक्ष में है।''[4] **डॉ.राधाकृष्णन के अनुसार** गीता में मानवजीवन दर्शनः– '' गीता, गुरु–शिष्य संवाद रुप में जीवन की समस्याओं का हल प्रस्तुत करती है । महाभारत की कथा तो प्रथम अध्याय में झलक रुप में है–शेष सभी अध्यायों में अर्जुन एवं श्री कृष्ण के माध्यम से सार्वभौमिक, सार्वकालिक मानव–जीवन की समस्याओ का हल प्रस्तुत किया गया है। अर्जुन एवं श्री कृष्ण तो प्रतीक रुप में प्रस्तुत लगते है। इस तरह यह ग्रंथ सम्प्रदाय विशेष की सीमा में नही

बंध पाता। गुरुशिष्य–संवाद के रुप में यह जहाँ शिक्षा–ग्रंथ है, वहाँ दूसरी ओर यह निर्देशन ग्रंथ भी है क्योकिसमस्या ग्रस्त अर्जुन के सभी प्रश्नों एवं समस्याओं का हल प्रस्तुत करके भी श्री कृष्ण, अर्जुन से विचार–विमर्श कर उसे स्वयं निर्णय लेने की स्वन्तत्रता देता है।''[5]

इस तरह गीता, धर्म, दर्शन, शिक्षा, निर्देशन, मनोविज्ञान का समन्वय ग्रंथ है। यह मानव मात्र के लिए जीवन–मार्ग बताने वाला ग्रंथ है ।

गीता दर्शन के अनुसार शिक्षा

गीता में ज्ञान की व्याख्या इस प्रकार की गई है–

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते ।

अविभक्तं विभक्तेषुतज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम् ।।[6]

अर्थात् जिसके द्वारा सब प्राणियों में केवल एक निर्विकार भाव देखा जाता है तथा विविधता में जहाँ एकता दिखाई देती है, उसी को सात्विक ज्ञान कहा जाता है। अतः गीता के अनुसार सात्विक ज्ञान ही शिक्षा है, जो प्रत्येक व्यक्ति में निहित ब्रह्म या परमात्मा की अनुभूति करवाने में सहायक होती है और जिनके ज्ञानचक्षु खुल गए हैं, वे ही इस पर परमात्मा के दर्शन कर सकते है, मोहान्ध प्राणी नहीं । यथाः ''विमूढ़ानानु पश्यन्ति, पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः '' ।

गीता के अनुसार शिक्षा के लक्ष्य

गीता में सात्विक ज्ञान की व्याख्या करते हुए बताया गया है जिसके द्वारा समस्त प्राणियों में केवल एक निर्विकार भाव देखा जाता है वही सात्विक ज्ञान है।उसकी प्राप्ति के लिए अग्रलिखित लक्ष्यों का निर्धारण किया गया है–

1 मोक्ष प्राप्ति का लक्ष्यः– काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, माया आदि आसक्तियों से दूर हटकर, इन्द्रिय निग्रह द्वारा निष्काम कर्म सम्पन्न कर आवागमन के बंधन से छुटकरा प्राप्त करना गीता के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य है।

2 आत्मपूर्णता की प्राप्तिः– सात्विक ज्ञान द्वारा परम तत्व की प्राप्ति आत्मपूर्णता का लक्ष्य है । इसकी प्राप्ति के लिए सर्वांगीणविकास पर गीता में बल दिया गया है।

3 निष्काम कर्म की प्रेरणा का लक्ष्यः– गीता के अनुसार निष्काम कर्म के लिए प्रेरित करना शिक्षा का लक्ष्य है। कर्महीन व्यक्ति समाज के लिए अनुपयोगी है।अतः व्यक्ति को कार्य करते रहना चाहिए किन्तु फल की इच्छा से विरक्त रहकर।

4 सामाजिक उन्नयन का लक्ष्यः– गीता–दर्शन का चिन्तन सामाजिक पृष्ठभूमि में परिपक्व हुआ है अतः परोपकार, त्याग व सेवाभाव को विकसित कर सामाजिक उन्नयन शिक्षा का लक्ष्य स्वीकार किया गया है।

5 चिन्तन क्षमता का विकासः–नैतिक–अनैतिक, कर्म–अकर्म, अच्छा–बुरा इनमें किसका वरण करना है यह विवेक चिन्तन क्षमता से ही विकसित हो सकता है। अतः गीता दर्शन व्यक्ति में चिन्तन क्षमता का विकास करना भी शिक्षा का लक्ष्य स्वीकार करता है ।

गीता दर्शन के अनुसार शिक्षक–शिक्षार्थी संकल्पना

गीता के अनुसार विद्यार्थी संयमी, रागद्वेष मुक्त, ब्रह्मचारी, सदाचारी होना चाहिये। विद्या प्राप्त करना योग कर्म है। अतः विद्यार्थी को योगी होना चाहिये। अध्ययन तपस्या के समान है। छात्र को इस तप कर्म में लीन रहना चाहिए उसे अपने धर्म में कभी भी त्रुटी नहीं करनी चाहिये अर्थात् स्वाध्याय में प्रमाद नहीं करना चाहिए ।

शिक्षक के मन में अपने छात्र के प्रति अन्नत प्रेम होना चाहिये । छात्र के हित की कामना उसकी प्रथम कामना होनी चाहिए। निर्भयता, बुद्धिशीलता, अहिंसा, संतोष, क्षमा, सत्य, आत्म–नियन्त्रण आदि गुणों से युक्त व्यक्तित्व वाला आचार्य छात्र होना चाहिये। इस विषय में गीता में उल्लेख किया गया है "अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनंजय" (हे अर्जुन ! अभ्यास रुप योग के द्वारा मेरे को प्राप्त होने के लिए इच्छा कर) अर्थात शिष्य अभ्यास द्वारा गुरु तत्व में स्वयं को मिला ले।

गीता दर्शन में पाठ्यक्रम–व्यवस्था

गीता के शिक्षा के उद्देश्यों को देखने से स्पष्ट है कि पाठ्क्रम में आध्यात्मिक व भौतिक दोनों ही पक्षों को स्वीकार किया गया है । गीता में आध्यात्मिक, धार्मिकता व नैतिकता से संबंधित ज्ञान को आवश्यक माना है। साथ ही ज्योतिष, कला, विज्ञान, गणित, खगोल, विद्या आदि विषयों पर भी जोर दिया गया है।

डॉ. ओड के अनुसार, ''छात्र जगत् का अध्ययन करते हुए भी उसी को पूर्ण न मानकर पीछे निहित चैतन्य सत्ता को समझें । समाज को ही पूर्ण न मानकर उसके पीछे निहित ईश्वरीय शक्ति को स्वीकार करें तथा हाड़–माँस से बने हुए शरीर को ही सर्वस्व न मानकर इसमें निहित उस दैवी सत्ता को पहचाने ।''[7]

गीता–दर्शन में पाठ्यक्रम के दो भागों में विभाजित किया गया है–

1 अपरा विद्या

2 परा विद्या

1. अपरा विद्याः–अपरा विद्या के अन्तर्गत भौतिक जगत का ज्ञान आता है, जिसे शरीर इन्द्रिय और मन की सहायता से प्राप्त किया जा सकता है–इसके अर्न्तगत सभी प्रकार का वैज्ञानिक व सामाजिक ज्ञान तथा मन व बुद्धि से प्राप्त अनुभवात्मक ज्ञान आता है।

2. परा विद्याः–'परा विद्या' के अर्न्तगत 'आत्मा–ज्ञान' आता है। गीता में इसे आध्यात्म, अक्षर कहा गया है । यह ज्ञान नित्य, पूर्ण एवं सनातन है। इसके अन्तर्गत वेद, उपनिषद् वेदान्त आदि अध्यात्म विज्ञान

ध्यान, धारण, समाधि, प्राणायाम एवं उपासना कियाएं समाहित है, जिनसे व्यक्ति को जन्म–मरण से मुक्ति की भावना का ज्ञान कराया जा सके, ताकि वह इस संसार रुपी बंधन से मुक्ति पा सके।

गीता के अध्याय 7 में परमब्रह्म ईश्वर की सत्ता का बड़ा सुंदर विवेचना किया गया है। कृष्ण इसे इस रुप में स्पष्ट करते हैं–

मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनञ्जय।

मयि सर्वमिदं प्रोतं सुत्रे मणिगणा इव।।[8]

''जगत् की सृष्टि और संहार का मुझसे श्रेष्ठ एवं स्वतंत्र कारण दूसरा कुछ नहीं है । यह सम्पूर्ण जगत् मुझमें उसी प्रकार पिरोया हुआ है जैसे सूत्र में मणियाँ ।''

वर्तमान शिक्षा–व्यवस्था में गीता का योगदान

वर्तमान शिक्षा में गीता के योगदान को निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा समझा जा सकता है :–

1. शिक्षा की आज जो स्थिति सवर्त्र दृष्टिगोचर हो रही है उसमें धार्मिक और सामाजिक विकृतियों को दूर करने, उसे सन्मार्ग पर ले जाने में गीता के उपदेशों की अतीव आवश्यकता है। गीता का महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त ''कर्मण्येवा'' कर्म करने में तेरा अधिकार हो, फल में नही, शिक्षा में श्रम की महत्त्वता बताता है और फल की आसक्ति का त्याग बताता है।

2. आज सर्वत्र निराशा, आपा–धापी और असंतुष्टि का वातावरण दृष्टिगोचर होता है। ऐसे में कर्मयोगी श्री कृष्ण का निष्काम कर्म का संदेश मानव–समुदायी के लिए तो आवश्यक है ही, साथ ही गीता यह भी संदेश देती है की जब–जब समाज में विश्रृखंलता उत्पन्न होती है, तभी समाज को उन्नत करने के लिए परमात्मा को शिक्षक के रुप में अवतरित होना पड़ता है ।

''यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।

अभ्युत्थानधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।[9]

3 गीता के चतुर्थ अध्याय में कृष्ण का कथनः–

''चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।

तस्य कर्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम् ।।[10]

ये शिक्षा देता है कि शिक्षा में व्यक्ति को उसके गुण और कर्मों के आधार पर महत्त्व दिया जान चाहिए–जन्म के आधार पर नहीं ।

4 कृष्ण को विश्वगुरु मान कर विश्व की वास्तविकता से परिचित होकर शिक्षा–पद्धति में सामाजिक उददे्श्यों को महत्तव दिया जाना चाहिए और व्यक्ति को अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों की ओर उन्मुख करना चाहिए।

5 शिक्षा में नैतिकता और आध्यत्मिकता के विकास पर अधिक बल दिये जाने की आवश्यकता है। अतः पाठ्यक्रम भौतिक जगत् तक ही सीमित न रखा जाए।

6 गीता यह भी कहती है कि समाज में परिवर्तन लाना आवश्यक है। इसमें शिक्षा की अतीव भूमिका है। वैज्ञानिक विकास, औद्योगिक क्रांति, मौलिक सृजन एवं उत्पादन आदि सभी कर्म–अधीन हैं, किन्तु कर्म परिश्रम पर आश्रित है। इस रुप में गीता के उपदेश आज संदर्भ में अधिक उपादेय है, जो व्यक्ति को जीवन पर्यन्त अपने कर्त्तव्य पर आरुढ़ रहने का संदेश देते है, जिससे समाज में यथोचित परिवर्तन लाया जा सके । लोकमान्य तिलक के अनुसार गीता का मुख्य उपदेश 'कर्मयोग' है, जो गीता की अनमोल देन कही जा सकती है।

7 छात्र और अध्यापक दोनों को अपनी–अपनी भूमिकाओं और उत्तरदायित्वों की और सजग रहनें की आवश्यकता है, जिससे शिक्षा के उद्देश्य पूर्ण हो सकें ।

8 अन्त में गीता में 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' जैसे आध्यात्मिक मूल्यों के लिए बौद्धिक, भावात्मक और संकल्पनात्मक प्रकियाओं को अपनाने पर आग्रह है, जो चारित्रिक संकट की स्थिति में औषधि का काम करते है । साथ ही गीता में प्रतिपादित नैतिकता और मानवतावादी मूल्यों की आज की 21 वीं सदी की शिक्षा को अतीव आवश्यकता है, जिससे भौतिकवादी प्रगति के साथ–साथ पारस्परिक मूल्यों को भी स्वीकारें।

9 श्रीमद्भवगद्गीता में छात्र के बाह्य शरीर तथा आत्मा दोनों को ही समान रूप से महत्त्व प्रदान किया गया है । इस प्रकार बालक का शरीर भी उतना ही पवित्र व दैवी है, जितनी उसकी आत्मा। छात्र की यह दैवी संकल्पना शिक्षक के लिये अतयन्त महत्त्व रखती है । जो शिक्षक ईश्वर की छवी देखता है, उसके छात्र उसकी उपासना के पात्र होते है, घृणा व उपेक्षा के पात्र नही । प्रत्येक बालक में देवत्व है, परन्तु वह प्रच्छन्न है और शिक्षा द्वारा उसे प्रकाश में लाया जा सकता है । अतः शिष्य देवो भवः की यह अनूठी परम्परा गीता में स्पष्ट दृष्टिगत होती है ।

इस प्रकार गीता का शिक्षा–दर्शन वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति कर, शिक्षा के पुनर्निर्माण में अपना अपूर्व योगदान दे सकता है

निष्कर्ष :

वर्तमान काल में भी भगवद्गीता के अनुसार शिक्षक एवं शिक्षार्थी को परस्पर एक दूसरे का सहयोग करते हुये एवं एक दूसरे की कल्याण की भावना रखते हुये कार्य करना चाहिए क्योंकि इसी प्रकार कार्य करते हुये कल्याण को प्राप्त कर सकते है और शिक्षण को सफल बना सकते है । भगवद्गीता के अनुसार भावयन्तः श्रेयः परमावाप्स्थ अर्थात एक दुसरे की उन्नति करते हुये कल्याण को प्राप्त करें । जहाँ श्री कृष्ण जैसा शिक्षक और अर्जुन जैसा शिक्षार्थी हो, वहा सफलता (विजय) अवश्य प्राप्त होगी ।

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण नें जो शिक्षा अर्जुन को प्रदान की थी, वैसी ही शिक्षा की जरूरत वर्तमान समय में सम्पूर्ण राष्ट्र एवं विश्व को है, क्योंकि भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण नें अपना उपदेश या

शिक्षा देने के बाद भी अर्जुन को अपना निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया था उसी प्रकार आज की शिक्षा प्रणाली में शिक्षक को अध्ययन कराकर या अपना ज्ञान बताकर विषय से संबंधित उसे निर्णय लेने के लिए तथा विचार विमर्श के लिए स्वतन्त्रा प्रदान कर देनी चाहिए ।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि श्रीमद्भागवत गीता में नीहित शिक्षा को अपना कर हम अपनी शिक्षा प्रणाली को उत्तम एवं श्रेष्ठ बना सकते है ।

सन्दर्भ :

1. तिलक लोकमान्य बाल गंगाधर, ''गीता रहस्य'', पृ.17
2. तिलक लोकमान्य बाल गंगाधर, ''गीता रहस्य'', पृ.06
3. ''श्रीमद्भगवद्गीता'', दूसरा अध्याय, श्लोक सं. 47
4. Scared Book of the East V.8, P.5-6
5. राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन खण्ड –1, पृ.483
6. ''श्रीमद्भगवद्गीता'', अठारहवाँ अध्याय, श्लोक सं. 20
7. परीक, कुमार महेश, ''शिक्षा दर्शन तथा उभरता भारतीय समाज'' पृ.245
8. ''श्रीमद्भगवद्गीता'', सातवाँ अध्याय, श्लोक सं. 07
9. ''श्रीमद्भगवद्गीता'', चौथा अध्याय, श्लोक सं. 07
10. ''श्रीमद्भगवद्गीता'', चौथा अध्याय, श्लोक सं. 13

सन्दर्भ ग्रंथ–सूची :

1. श्रीमद्भगवद्गीता, गीता प्रेस, गोरखपुर
2. पारीक, प्रो.मथुरेश्वर, शर्मा प्रो.रजनी, ''उदीयमान भारतीय समाज और शिक्षा'' शिक्षा प्रकाशन, जयपुर–2007
3. पारीक, कुमार महेश, ''शिक्षा दर्शन तथा उभरता भारतीय समाज'', श्री कविता प्रकाशन, जयपुर–2007
4. तिलक लोकमान्य बाल गंगाधर, ''गीता–रहस्य'' गायकवाड़ वाडा, पूणे–1915
5. Scared Books of the Ease V.8
6. राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन खण्ड – 1, देहली राजपाल एण्ड सन्स–1969
7. शर्मा डी.एल., ''शिक्षा तथा भारतीय समाज'' आर.लाल बुक डिपो मेरठ –2002